International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 3; Issue 2; March 2018; Page No. 775-777

प्राचीन भारत में धार्मिक सहिष्णुता की भावना

डॉ० आशुतोष कुमार सिंह
सहायक आचार्य (तदर्थ), प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, डी.ए.वी.पी.जी. कॉलेज, वाराणसी, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

भारत सहित दुनियाँ के अलग–अलग देशों में कई धर्म प्रवर्तन हुए, साथ–साथ विभिन्न धर्मों और सभ्यताओं के बीच अंतःक्रिया भी आरंभ हुई। इस प्रकार भारत तथा अन्य देश बहुधर्मी बन गए। चूंकि हिन्दू, जैन, बौद्ध, सिख आदि धार्मिक संप्रदायो का गठन भारत में हुआ, अतः यहाँ धार्मिक विविधता का होना स्वाभाविक था। इसी बीच इस्लाम,ईसाई आदि धर्मो के लोग भी यहाँ आते रहे तथा यहाँ की सामाजिक–राजनीतिक परिस्थितियों के कारण उन्हें अपने–अपने मत के प्रचार का पूरा अवसर मिला। आज का भारत सभी प्रकार के मतों, सिद्धान्तों और मान्यताओं को समान महत्व देने वाला देश कहा जा सकता है। भारतीय संविधान भी भारत को एक पंथनिरपेक्ष राष्ट्र घोषित करता है। हमारे संविधान की उद्देशिका में समस्त भारतीय नागरिकों को विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतन्त्रता प्रदान किया गया है। भारतीय संविधान के भाग–3 के अन्तर्गत अनुच्छेद 13 में धर्म, नस्ल, जाति, लिंग या जन्मस्थान के आधार पर भेदभाव के निषेध का प्रावधान किया गया है। सभी धर्मों के प्रति सहानुभूति रखने के कारण यहाँ धार्मिक सहिष्णुता की भावना अत्यन्त प्राचीन काल से ही देखने को मिलती है। एक सामाजिक प्राणी होने के कारण मनुष्य के लिए एक दूसरे के प्रति सहनशीलता का होना अत्यन्त आवश्यक है।

सर्वधर्म समभाव को धार्मिक सहिष्णुता का ही एक रुप माना जाता है। सभी धर्मो के प्रति समान भाव रखना सर्वधर्म समभाव है किन्तु यह एक जटिल कार्य है। जातक को बचपन से सिर्फ अपने धर्म की शिक्षा मिली होती है। उसे यही बताया जाता है कि उसका धर्म श्रेष्ठ है और दूसरों के धर्म निकृष्ट। यह असहिष्णुता है जो किसी अन्य जाति, धर्म और परंपरा से जुड़े व्यक्ति के विश्वासों, व्यवहार व प्रथा को मानने की अनिच्छा है। ये समाज में उच्च स्तर पर घृणा, अपराधों और भेदभाव को जन्म देता है। ये किसी भी व्यक्ति के दिलो–दिमाग में इंकार करने की भावना को जन्म देता है। ये लोगों को एकता, बिना भेदभाव, स्वतन्त्रता और अन्य सामाजिक अधिकारों से जीने की अनुमति नहीं देता। समाज में असहिष्णुता का जन्म जाति, संस्कृति, लिंग, धर्म और अन्य असहनीय कार्यो के द्वारा होता है। असहिष्णुता किसी अन्य धर्म, जाति या परंपरा के समूह के लोगों के विश्वासों प्रथाओं या विचारों को स्वीकार करने, प्रशंसा करने और सम्मान करने का इंकार करना है। इजराइल के यहूदी और फिलस्तीनी अपनी पहचान, आत्मनिर्णय, सुरक्षा, अलग राज्य आदि के विभिन्न मुद्दों के कारण उच्च स्तर की असहिष्णुता का सबसे अच्छे उदाहरण हैं। उनके बीच असहिष्णुता लगातार हिंसा में बदल गयी है। असहिष्णुता अपने धर्म, जाति या राष्ट्रीयता से अलग किसी व्यक्ति को दूसरे धर्म, जाति या राष्ट्रीयता को मानने, अनुकरण करने और बढ़ावा देने की अनुमति नही देता। वहीं दूसरी ओर, सहिष्णुता वो गुण है जो विविधता के होने के बावजूद भी समाज में एकता को बढ़ावा देता है। ये जीओ और जीने दो के सिद्धान्त को मानता है चाहे व्यक्ति किसी भी धर्म, जाति या प्रथा का मानने वाला ही क्यों न हो। विलियम यूरी का मानना है कि सहिष्णुता न केवल एक दूसरे के साथ रहने की अनुमति देता है या अन्याय के मामले में उदासीन रहता है, बल्कि प्रत्येक व्यक्ति के लिए सम्मान और आवश्यक इंसानियत दिखाता है। जब व्यक्ति आत्मसाक्षात्कार के लिए प्रत्येक पर पदार्थ के प्रति ममत्व एवं आसक्ति का त्याग करता है तब वह राग–द्वेष से रहित हो जाता है, वह आत्मचेतना से जुड़ जाता है, शेष सबके प्रति उसमें न राग रहता है न द्वेष। इसी प्रकार जब साधक सृष्टि के प्रत्येक प्राणी को आत्मतुल्य समझता है तब भी उसका न किसी से राग रह जाता है और न किसी से द्वेष। समस्त प्राणियों के प्रति मैत्रीभाव, प्रेमभाव तथा समभाव होना ही धर्म है और इस दृष्टि से 'सर्वधर्मसमभाव' में से यदि विशेषणों को हटा दें तो शेष रह जाता है– धर्मभाव। सम्प्रदाय में भेद दृष्टि है, धर्म में अभेद दृष्टि। विश्व में इसी अभेद दृष्टि का विकास होना चाहिए। विश्व के सभी धर्मों में नैतिक मूल्यों का प्रतिपादन है, मानव मूल्यों की स्थापना है, मानव–जाति में सदाचरण के प्रसार का प्रयास है। इन नैतिक मूल्यों, सद्गुणों, एवं सदाचारों को व्यक्त करने वाली शब्दावली में भिन्नता होने के कारण वाह्य धरातल पर हमें धर्मों के साधना पक्ष में अन्तर प्रतीत होता है। तात्विक दृष्टि से सभी धर्म मनुष्य के सद्पक्ष को उजागर करते हैं एवं सामाजिक जीवन में शान्ति, बन्धुत्व, प्रेम, अहिंसा एवं समतामूलक विकास के पक्षधर हैं। सर्वधर्म–समभाव की उदात्त चेतना का विकास सम्भव है। मतवादों का भेद हमारे ज्ञान एवं प्रतिपादन शक्ति की अपूर्णता के कारण है। प्रत्येक तत्व पर अनेक दृष्टियों से विचार सम्भव है। एकांगी प्रतिपादन के कारण वे परस्पर विरोधी प्रतीत होते हैं। प्रतीत होने वाले विरोधों का शमन सम्भव है। प्रतीयमान विरोधी दर्शनों में समन्वय स्थापित किया जा सकता है।

धार्मिक सहिष्णुता स्थापित करने के मार्ग गुणीजन सुझा गए है। विद्वानों का मत हैं कि संसार के सभी धर्मों के ग्रंन्थों का सार एक ही है। गीता, कुरान, बाइबिल, गुरुग्रंथ सभी में एक ही परमपिता को ढूंढ़ा जा सकता है। दुनियाँ के श्रेष्ठतम धर्म और दुनिया के तथाकथित निकृष्टतम धर्म दोनों एक ही धरातल पर खड़े हैं। सभी धर्मों में एक बात आम है और वह है सार्वजनिक गुंडागर्दी। आध्यात्मिक प्रवचन सुनना अच्छा लगता है लेकिन रोजमर्रा की जिंदगी में हमारा पाला जिस धर्म से पड़ता है, वो बेहद आक्रामक, खौफनाक, क्रूर और अश्लील है जो उन्मादियों को कुछ भी करने की छूट देता है और नागरिकों के शांतिपूर्ण ढंग से जीने के बुनियादी अधिकार का हनन करता है।

धार्मिक दंगों को असभ्यता की चरम पराकाष्ठा कहा जा सकता है। इन दंगो के दौरान कुछ लोग सिर्फ इसलिए किसी की जान, माल और इज्जत को नुकसान पहुँचाते है क्योंकि वह किसी दूसरे धार्मिक

समूह का है। किसी भी सभ्य समाज में खास तौर से एक ऐसे धर्मनिरपेक्ष और लोकतान्त्रिक राज्य में जिसमें विभिन्न धर्मों को मानने वाले और किसी धर्म को न मानने वाले मानवतावादी लोग भी रहते हो, नागरिकों के शान्तिमय सहअस्तित्व के लिए धार्मिक सहिष्णुता एक अनिवार्य शर्त है। धार्मिक सहिष्णुता की आवश्यकता और महत्व को इसी से समझा जा सकता है। किसी भी धर्म के धर्मग्रंथों और बुनियादी धार्मिक विश्वासों की शाब्दिक सत्यता में विश्वास को रुढ़िवाद कहा जाता है। रुढ़िवाद धार्मिक सहिष्णुता के मार्ग में अवरोध उत्पन्न करता है। धार्मिक सहिष्णुता का आदर्श यह है कि किसी एक धर्म को मानने वाला व्यक्ति अपने धर्म की मान्यताओं के अनुसार स्वयं अपना जीवन व्यतीत करते हुए भी दूसरे धर्मों को मानने वालों के प्रति नफरत या असहनशीलता का रवैया न अपनाए, बल्कि उनके जीवन, स्वतन्त्रता और सम्पत्ति के अधिकार का सम्मान करे। दूसरे शब्दों में कोई व्यक्ति अपने धार्मिक विचारों को जबरदस्ती दूसरों पर लादने का प्रयत्न न करें या सिर्फ इसलिए किसी की जान का दुश्मन न बन जाए क्योंकि उसकी धार्मिक मान्यताएँ उससे अलग हैं। व्यापक दृष्टि से धार्मिक लोगों द्वारा मानवतावादियों के प्रति सहनशीलता और मानवतावादियों द्वारा धार्मिक लोगों के प्रति सहनशीलता भी धार्मिक सहिष्णुता के अंतर्गत शामिल है। धार्मिक सहिष्णुता में धार्मिक कट्टरता का अभाव होता है। धार्मिक कट्टरता धार्मिक असहिष्णुता का मूल स्रोत है और धार्मिक कट्टरता पर सीधा प्रहार किए बिना धार्मिक सहिष्णुता को बढ़ावा नहीं दिया जा सकता। ईश्वरवादी धर्मों में जैन और बौद्ध जैसे निरीश्वरवादी धर्मों की तुलना मे अधिक कट्टरता होती है।[1] विभिन्न सम्प्रदायों में छिड़ने वाले धार्मिक संघर्षों को धार्मिक सहिष्णुता की नीति का पालन करके रोका का सकता है। धार्मिक उन्मादों से बचाव, धार्मिक सहिष्णुता एवं विभिन्न धर्मों के मानने वालों के शान्तिमय सह अस्तित्व को प्रोत्साहित करने के इरादे से धर्मों के बीच एकता या समन्वय स्थापित करने के प्रयत्न भी हुए हैं। भारत में मध्ययुग में अकबर द्वारा दीने इलाही की स्थापना ऐसा ही एक प्रयत्न था। अकबर द्वारा यह प्रयत्न पारसी, यहूदी, ईसाई, इस्लाम, और हिन्दू धर्म के तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर किया गया था। उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी में राजाराममोहन राय, विवेकानन्द और गाँधी आदि द्वारा भी धर्मों के बीच समन्वय स्थापित करने के प्रयत्न किए गए हैं। राममोहन राय के अनुसार सभी धर्म एक समान हैं इसलिए हर धर्म के प्रति श्रद्धाभाव रखना प्रत्येक मानव का कर्तव्य है।[2] इस सन्दर्भ में विवेकानन्द एक ऐसे सर्वव्यापी धर्म की बात करते हैं जिसके दरवाजे हर व्यक्ति के लिए खुले होने चाहिए। व्यक्ति के धर्म का निर्धारण जन्म के आधार पर नहीं होना चाहिए, बल्कि हर व्यक्ति को इस बात की छूट मिलनी चाहिए कि वह किसी भी धर्म को अपनाए। सार्वभौम धर्म को सभी धार्मिक सम्प्रदायों को सन्तुष्ट करने में समर्थ होना चाहिए। विवेकानन्द की राय में सभी धर्मों में सामान्य तथ्य ईश्वर में विश्वास को सर्वव्यापी धर्म का सार माना जा सकता है।[3] गाँधी जी के अनुसार धर्म का मूल तत्व है नैतिकता। गाँधी जी ने सभी धर्मों के भाईचारे या मैत्रीभाव की कल्पना की है। गाँधी जी का निष्कर्ष है कि सभी धर्म सत्य हैं। सभी धर्मों में कुछ दोष हैं। सभी धर्म लगभग उतने ही प्रिय हैं जितना कि खुद का हिन्दू धर्म।[4] डॉ. राधाकृष्णन ने हिंदू धर्म की 'सहिष्णुता' और 'उदारता' के आधार पर उसे विश्वधर्म के रुप में प्रस्तुत किया है।[5] डॉ. भगवान दास के अनुसार विश्व में प्रचलित धर्मों में मौजूद सामान्य तत्वों के आधार पर सार्वभौम धर्म की स्थापना संभव है।[6]

धार्मिक सहिष्णुता भारतीय संस्कृति की मूल पहचान है। इसकी चिरस्थायिता इसी विशेष गुण के कारण बनी हुयी है। भारतीय संस्कृति के आद्य एवं मान उन्नायकों ने सहिष्णुता की भावना से ही इसकी नींव पुष्ट की है। वैदिक मंत्रों में 'एक सत्' को मानते हुए उसे नाना रुपों में विस्तीर्ण होने बात कही गयी है। यहाँ बताया गया है कि ईश्वर एक है जिसे लोग भिन्न–भिन्न नामों से जानते हैं।[7] *श्रीमद्भागवदगीता* में भगवान कृष्ण स्पष्ट करते हैं कि ईश्वर की प्राप्ति के अनेक धर्म, मत तथा उपासना पद्धतियाँ अपनायी जाती हैं, लेकिन उनमें परस्पर द्वेष नहीं होना चाहिए क्योंकि सबका लक्ष्य एक ही अर्थात् परमेश्वर की प्राप्ति मात्र है।[8] जब सभी धर्मों एवं सम्प्रदायों का लक्ष्य एक ही ईश्वर की प्राप्ति है, तब उनमें परस्पर किस बात के झगड़े हो सकते हैं। अपने धर्म की रक्षा और पालन के साथ–साथ व्यक्तिगत एवं सामूहिक विविध धर्मों के प्रति धैर्यशीलता, सहनशीलता और क्षमाशीलता जैसे मानवीय गुणों को अपनाते हुए अन्य धर्मों का आदर–सम्मान करना ही धार्मिक सहिष्णुता है। मक्का–मदीना, वैष्णो देवी, अजमेर, बोरोबुदूर, वृंदावन, काशी, कैलाश इत्यादि बहुत से ऐसे केन्द्र हैं जहाँ समानता, समरसता और भाईचारे को प्रगाढ़ता प्रदान की जाती है। धार्मिक सहिष्णुता पर धर्मियों के धार्मिक विश्वासों, मान्यताओं तथा अनुष्ठानिक प्रक्रियाओं के प्रति उदारतापूर्ण तथा संवेदनशील दृष्टिकोण अपनाना है। भारतीय संस्कृति में इसी सहिष्णुता की भावना को आद्योपान्त पोषित किया गया है। जैन धर्म में इस भावना को 'स्यादवाद' दर्शन के माध्यम से एवं बौद्ध धर्म में दूसरे धर्म की आलोचना से बचने वाले सुझावों के माध्यम से यह स्पष्ट किया गया है। महान सम्राट अशोक अपने अभिलेखों में जहाँ धम्म की व्याख्या करता है, वहाँ इसी भावना को ध्यान में रखते हुए अपनी प्रजाजनों को सलाह देता है कि वे दूसरे के धर्मों का समादर करें, उन्हें प्रेमपूर्वक सुनें, क्योंकि सभी धर्मों में आन्तरिक समानताएँ होती हैं। सातवें शिलालेख में अशोक ने कहा, ''सभी संप्रदाय सभी स्थानों में रह सकते है क्योंकि सभी आत्मसंयम और भावशुद्धि चाहते हैं।" बारहवें शिलालेख में उसने घोषणा की कि अशोक सभी संप्रदायों के गृहस्थ और श्रमणों का दान आदि के द्वारा सम्मान करता हैं। किंतु महाराज दान और मान को इतना महत्व नहीं देते जितना कि इस बात को देते हैं कि सभी संप्रदायो के लोगों में सारवृद्धि हो, सारवृद्धि के लिए मूलमंत्र है वाक्संयम (वचोगुत्ति) लोगों को अपने संप्रदाय की प्रशंसा तथा दूसरे के संप्रदायों की निंदा नहीं करनी चाहिए।[9] शांति स्थापना के लिए इस आचरण के अनुपालन को सर्वोच्च प्राथमिकता देना चाहिए।[10] भारतीय संस्कृति में इतिहास में ऐसे अनेक उदाहरण हैं जहाँ सहिष्णुता को विशेष महत्व प्रदान किया गया। अनेक त्यौहार विभिन्न संप्रदायों के लोग मिलकर मनाते थे। चाहे भक्ति आन्दोलन हो अथवा अलवार व नैयवार संतो का आन्दोलन हो या राजपूत काल में हिन्दू महिलाओं द्वारा मुस्लिम शासकों के हाथ में राखी बाँधना हो अथवा मोहम्मद बिन तुगलक द्वारा होली पर्व मनाया जाना हो, इन सभी में धार्मिक सहिष्णुता की भावना दिखायी देती है। इसी भावना के फलस्वरूप भारतीय भूमि में बसने वाली विदेशी जातियों को विधर्मी न मानकर उन्हें स्वजन माना गया तथा इस देश की संस्कृति से अनुप्राणित किया गया।

संदर्भ

1. रमेन्द्र, धर्मदर्शन सामान्य एवं तुलनात्मक, मोतीलाल बनारसीदास, 2006, पृ. 164–167.
2. मधुसूदन प्रसाद, राजा राममोहन राय का धर्म दर्शन, अशोक कुमार वर्मा (सं.) स्वतन्त्रोत्तर भारतीय दार्शनिक चिन्तन, मोतीलाल बनारसी दास, पटना, 1993, पृ. 22–23.
3. बसन्त कुमार लाल, कन्टेंपरेरी इण्डियन फिलॉसफी, मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, 1978, पृ. 43–45.

4. धीरेन्द्र मोहन दत्त, द फिलॉसफी ऑफ महात्मा गाँधी, कलकत्ता, 1968, पृ. 49.
5. वेद प्रकाश वर्मा, धर्मदर्शन की मूल समस्याएँ, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, 1991, पृ. 471.
6. वेद प्रकाश वर्मा, धर्मदर्शन की मूल समस्याएँ, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, 1991, पृ. 474–475.
7. ऋग्वेद, 1/164/46.
8. श्रीमदभागवदगीता अध्याय 4 श्लोक11.
9. द्विजेन्द्रनारायण झा व कृष्णमोहन श्रीमाली, प्राचीन भारत का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, 2003, पृ. 184.
10. द्रष्टव्य, द्वादश शिलालेख (गिरनार संस्करण), पंक्ति 2–9.